2026 Volume: 02 Issue: 07 www.ijrpa.com ISSN 2456-9995 Research Article

International Journal Research Publication Analysis

Page: 01-15

जादुई यथार्थवाद का रचनात्मक भाषा-शिल्प, शैली और साहित्यिक पाठ-मर्म (पंकज बिष्ट की कहानी '*बच्चे गवाह नहीं हो सकते*' के पाठ विश्लेषण के संदर्भ में)

***[1]अनुपम श्रीवास्तव, [2]डॉ. नीलम यादव**

[1]शोधार्थी, पीएच.डी. (भाषाविज्ञान), भाषाविज्ञान विभाग, क. मुं. हिंदी तथा भाषाविज्ञान विद्यापीठ, डॉ. भीमराव आंबेडकर विश्वविद्यालय, आगरा

[2]सह. प्रोफ़ेसर, भाषाविज्ञान विभाग, क. मुं. हिंदी तथा भाषाविज्ञान विद्यापीठ, डॉ. भीमराव आंबेडकर विश्वविद्यालय, आगरा

Article Received: 20 June 2026
Article Revised: 10 July 2026
Published on: 30 July 2026

***Corresponding Author: अनुपम श्रीवास्तव**

शोधार्थी, पीएच.डी. (भाषाविज्ञान), भाषाविज्ञान विभाग, क. मुं. हिंदी तथा भाषाविज्ञान विद्यापीठ,

DOI: https://doi-doi.org/101555/ijrpa.3257

आलेख-सारांश

साहित्यिक लेखन की विशिष्ट भाषा-शिल्पयुक्त रचनात्मक शैली और विशिष्ट विमर्शपरक विचारधारा के रूप में जादुई यथार्थवाद (Magical Realism) आधुनिक साहित्य का एक बहुचर्चित अध्याय है। एक साहित्यिक पाठ-दृष्टि के रूप में अपने देश-काल और परिवेश की मार्मिक आलोचना के रूप में अभिव्यक्त होता है। हिंदी सहित विभिन्न भारतीय भाषाओं में भी जादुई यथार्थवादी रचनाएँ लिखी गई हैं। हिंदी में पंकज बिष्ट के कहानी संग्रह बच्चे गवाह नहीं हो सकते (1986) को इस शैली का पहला रचनात्मक पाठ माना गया है। हिंदी साहित्य में लेखन-शैली के बारे में शोध और समीक्षापरक दृष्टि से काम किए जाने की ज़रूरत है। प्रस्तुत आलेख इसी दिशा में एक लघु प्रयास है।

बीज शब्द : उपभोक्तावाद, जादुई यथार्थवाद, पंकज बिष्ट, पाठ-भाषा, पाठ-विश्लेषण, भूमंडलीकरण, मध्यमवर्ग, मनोरंजन, विज्ञापन, सामाजिक स्तर-भेद

1. पंकज बिष्ट का लेखन

चर्चित कहानीकार, उपन्यासकार, सामयिक चिंतक-समालोचक पंकज बिष्ट ने हिंदी कथा-साहित्य को पाठ-भाषा, शिल्प और सर्जनात्मक प्रयोगों से समृद्ध किया है। उन्होंने अपने समय और समाज के अनदेखे संघर्ष और अनकहे यथार्थ को कथावस्तु एवं कथा-चर्चा का विषय बनाया। आलोचक जानकी

प्रसाद शर्मा के अनुसार, "*शुरू से ही उन्होंने अधिक के बजाय सार्थक लिखने के रवैये को वरीयता दी है।*" [1] पाँच दशक से अधिक लंबे साहित्यिक जीवन में पंकज बिष्ट ने लगभग चालीस कहानियाँ, तीन उपन्यास (लेकिन दरवाजा, उस चिड़िया के नाम और पंखों वाली नाव), एक बाल उपन्यास और अनेक महत्त्वपूर्ण लेखों की रचना की है। साहित्यिक पत्रिका 'आजकल' के बाद वे 'समयान्तर' के संपादन और प्रकाशन से वे नियमित जुड़े हैं। पंकज बिष्ट की रचना-प्रक्रिया के बारे में उनका एक लंबा वीडियो आत्माराम सनातन धर्म महाविद्यालय, (दिल्ली विश्वविद्यालय) के यू-ट्यूब चैनल पर देखा जा सकता है।

2. 'बच्चे गवाह नहीं हो सकते' कहानी का परिचय और कथा सार

यह कहानी अपने बच्चे की इच्छा पूरी करने और अपने मनोरंजन के लिए एक अदद टी.वी. खरीदने के संघर्ष पर केंद्रित है। कहानी का प्रारंभ बच्चे का मन रखने के मूल तर्क के साथ होता है।[2] दूसरा तर्क कहानी के नायक के अपने सामान्य ज्ञान और सामाजिक स्तर की प्रतिष्ठा से जुड़ा है।[3] बिशन (कहानी का नायक) किसी दफ़्तर में काम करने वाला एक आम मध्यमवर्गीय आदमी है। पहले तर्क का संबंध उसके बेटे रघुवा से और दूसरे का उसके साथी आहूजा से जुड़ा है। बिशन और रघुवा कहानी के केंद्रीय पात्र हैं। इनके अलावा कहानी में कुछ और गौण पात्र भी हैं, जैसे– 38 नं. वाले, 102 नं. वाले, 55 नं. वाले, चावला इलेक्ट्रॉनिक्स का मालिक, अकाउंडेंट वर्मा, डॉक्टर, बिशन दत्त की पत्नी और रघुवा के अलावा उसके बाक़ी दो बच्चे आदि। इसका संक्षिप्त कथानक (कथा-सार) इस प्रकार है-

किसी एक दिन (संभवतः 3 जनवरी 1982) एक मध्यमवर्गीय तृतीय श्रेणी कर्मचारी बिशन दत्त से उसके साथी आहूजा ने सामान्य ज्ञान से संबंधित कुछ सवाल-जवाब हुए। इस संवाद के अंत में आहूजा, अखबार पढ़ने के शौकीन और अपने सामान्य ज्ञान पर नाज़ करने वाले बिशन दत्त के मन में एंटरटेनमेंट और नॉलेज के नये माध्यम माध्यम टी.वी. के लिए आकर्षण उत्पन्न कर देता है।

इसके दो दिन बाद रविवार को बिशन का, 11 वर्ष का बेटा रघुवा 102 नंबर वालों की खिड़की का शीशा पत्थर मारकर तोड़ देता है। इसकी वजह से बिशन और 102 नंबर वालों के बीच शाब्दिक फौजदारी (गाली-गलौज) हो जाती है। ख़ास रविवार को ही टी.वी. पर आने वाली फ़िल्म छूट न जाए, इस वजह से मुहल्ले वालों ने इनका झगड़ा जल्दी-जल्दी शांत करा दिया। ख़ास कर 35 नंबर वालों ने 102 नंबर वालों

---

[1] https://janjwar.com/post/rajkamal-chaudhary-award-well-known-writer-to-pankaj-bisht

[2] मूल तर्क वैसे यही था कि बच्चे तो आखिरकार बच्चे ही हैं। उनका मन रखना ही पड़ता है वरना पिता हुए न हुए बराबर ठहरा। (बिष्ट 44)

[3] आहूजा से मात खाने के बाद वह अभी बहुत हो गया अब-कुछ-करना चाहिए वाली मानसिकता में पहुँचा ही था ××× (बिष्ट 45)

आहूजा से जी० के० में हारना नहीं है, अगली बार न जाने किस के अण्डों के बारे में बात कर बैठे। (बिष्ट 49)

को डाँटकर चुप कराया। 68 नंबर वाले सारे बच्चों समेत बिशन को न केवल अपने घर फ़िल्म दिखाने ले गए बल्कि मध्यांतर में उसे एक पूरा कप चाय भी पिलवाई। इसी समय बिशन ने अपने लिए टी.वी. खरीदने फैसला कर लिया।

इसके अगले सप्ताह का समय टी.वी. खरीदने की योजना बनाने और उसे अमल में लाने पर व्यतीत हुआ। टी.वी. खरीदने के लिए बिशन ने अपने दफ़्तर के साथी, वर्मा को खिला-पिलाकर राजी किया। वर्मा की मदद से उसे अपने पीएफ से 2000 रुपये की राशि पाने में सफलता हासिल हुई। इससे टी.वी. खरीद का आधा मूल्य चुकाया जा सकता था। बाक़ी ख़रीद राशि चुकाने के लिए किश्तों की योजना का सहारा लिया गया। अगले 25 महीने तक 100 रुपये प्रति माह की किश्त अदा करने की लिखित गारंटी पर शनिवार के दिन बिशन के घर एक नया टी.वी. आ गया। इसके साथ ही अल्प वेतनभोगी बिशन के सामने किश्तों पर ख़रीदे गए टी.वी. और पीएफ-पेशगी का कर्ज चुकाने के साथ-साथ अपनी सीमित तनख़्वाह और घर-गृहस्थी के सुनिश्चित खर्चों के बीच तालमेल बनाने की बड़ी चुनौती खड़ी हो जाती है। टी.वी. खरीदने के लिए, दफ़्तर से लिए गए लोन और टी.वी. खरीद की मासिक किश्तों की दोहरी मार से उसकी ८०० रुपये की तनख्वाह घटकर 650 रुपये रह गई । वह इसकी भरपाई के लिए घर के दूध, फल-सब्जी के साथ-साथ अपनी बीमारी और दवाईयों के खर्चे में कटौती करने को मजबूर हो गया। किश्तें भरने के दबाव में, घर-खर्च की मुश्किलों के साथ-साथ उसकी बीमारी गंभीर रूप लेती चली गई। 12 मार्च 1984 को टी.वी. की आखिरी किश्त चुका कर वह अपने-आपको काफ़ी हल्का महसूस करने लगा। इसके बाद 16 मार्च को वह काफ़ी हद तक बिगड़ चुके अपने रोग के इलाज के लिए डॉक्टर के पास गया। डॉक्टर ने उसे तुरंत अस्पताल में भर्ती होने की सलाह दी। इसे उसने टी.वी. पर अगले रविवार को आने वाली फ़िल्म देखने के लालच में टाल दिया। फिर, रविवार, 18 मार्च 1984 का दिन आया जब पूरी तरह कर्ज मुक्त होने की तसल्ली के साथ वह टी.वी. पर फिल्म देख रहा था। फ़िल्म और फ़िल्म के अंतराल में आने वाले विज्ञापनों के दौरान अचानक बिशन की हालत बिगड़ गई और ख़ून की उलती करते हुए उसकी मृत्यु हो जाती है।

इस घटनाक्रम के दौरान बिशन के पास केवल उसका बेटा रघुवा मौजूद था। वह टी.वी. पर घट रही घटनाओं और उसकी आँखों के सामने घर में घट रही दुर्घटना को एक समानांतर घटना की तरह देखता और महसूस करता है। उसे तत्काल कुछ भी समझ नहीं आया। अपनी किंकर्त्तव्यविमूढ़ मनःस्थिति में वह इस हादसे का चश्मदीद लेकिन गूँगा गवाह भर बनकर रह गया। रघुवा, अपने पिता की आकस्मिक मौत का गवाह तो है लेकिन उसके अनुभव की अपरिपक्वता उसे सामाजिक तौर पर इस घटना का प्रकट और मुखर गवाह होने से रोक देती है। घटना के पीछे के कारण और कड़ियाँ लेखक का अनुभव है किंतु वह कहानी का लेखक भर है, कथा-घटना में उसका कोई हस्तक्षेप नहीं। यही कहानी का मर्म

बिंदु है जो पूरी कहानी को एक सामान्य यथार्थवादी कहानी के शिल्प से हटकर जादुई यथार्थवादी कहानी के साँचे में ढाल देता है।

3. कहानी-पाठ का विश्लेषण

3.1. पाठ-गठन : कथाक्रम के गठन और विकास की दृष्टि से इसके कथा सूत्र-संयोजन को दिए गए आरेख और इससे संबंधित तालिका के माध्यम से समझा जा सकता है। पृष्ठों एवं पंक्तियों की संख्या का विवरण पंकज बिष्ट के कथा-संग्रह *बच्चे गवाह नहीं हो सकते* (प्रथम सं., राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, वर्ष 1986) में प्रकाशित कहानी-पाठ पर आधारित है –

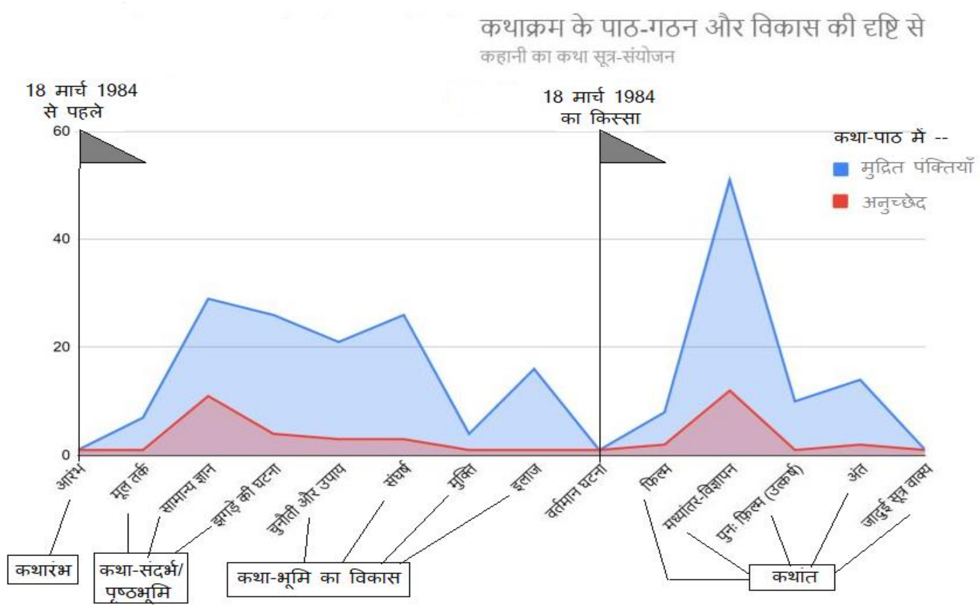

कथारंभ	**कथा-संदर्भ/ पृष्ठभूमि, मूल तर्क**	**कथा-भूमि का विकास**			**कथांत**
		चुनौती और उपाय	संघर्ष	मुक्ति	
18 मार्च से पहले की कथा-घटना (अनु. 1)	मूल तर्क वाक्य (अनु. 2 और अनु. 3 से अनु. 13)	सामाजिक यथार्थ का बोध, संकल्प से उपलब्धि तक (अनु. 17 से 20)	(अनु. 21 से 23)	कर्ज से मुक्ति (अनु. 24)	18 मार्च, 1985 की कथा-घटना (अनु. 27 से 44)
	झगड़े का संदर्भ (अनु. 2)	झगड़े का निपटारा (अनु. 17)	घर-खर्चों में कटौती (अनु. 21)	इलाज (अनु. 25)	चरम (अनु. 38 से 40)
	सामान्य ज्ञान चर्चा का संदर्भ	अगले सप्ताह की चुनौती (अनु. 18)	पुरानी खाँसी का उभरना	होली का दिन	उत्कर्ष (अनु. 41 से 43)

	(अनु. 3)		(अनु. 22)	(अनु. 26)	
	झगड़े की घटना (अनु. 14)	उपाय- पी.एफ. लोन प्राप्ति (अनु. 19)	बीमारी की उपेक्षा का कष्ट (अनु. 23)		जादुई सूत्र[4] (अनु. 44)
		उपलब्धि - नये टी.वी. का आगमन (अनु. 20)			
1 अनु./ 1 वाक्य	2 पृष्ठ/ 15 अनु.	1¼ पृष्ठ/ 4 अनु.	1 पृष्ठ/ 4 अनु.	¾ पृष्ठ/ 3 अनु.	3 पृष्ठ/18 अनु.)
↑ — कथा सूत्रों का विस्तार — ↑					

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि कहानी पश्चदीप्ति पद्धति में आरंभ होती है। इसके बाद इसकी पृष्ठभूमि को बताने वाले दो घटना-संदर्भ (तर्क-वाक्य) दिए गए हैं। पहले वर्तमान के निकट वाला और फिर उससे पिछला तर्क। इन घटनाओं का समय केंद्रीय घटना (1984) से लगभग 2 वर्ष पुराना (1982) है। इसके बाद वर्तमान या केंद्रीय घटना का वर्णन आता है। आठ पृष्ठों में दर्ज इस कहानी के शुरुआती 5 पृष्ठ कथा-घटना की पृष्ठभूमि और विकास को दर्शाते हैं। बाक़ी 3 पृष्ठों में केंद्रीय घटना का वर्णन है। इन कथा-भागों को 18 मार्च 1984 से पूर्व का किस्सा और 18 मार्च का किस्सा, दो भागों में जोड़ा गया है। समेकित रूप से यह कथा-घटना काल (1982-1984 तक लगभग 2 साल) के दौरान देश-काल और आम आदमी की ज़िंदगी में हो रहे बदलावों का असर, आदमी की उनसे टकराहट और उसकी त्रासद परिणति दिखाने वाली कहानी है। इसमें देश-काल के अंतर्गत सामाजिक संबंधों और सूचना-संचार तकनीकी परिदृश्य में हो रहे बदलावों को लेकर लेखक ने एक किशोरवय बच्चे की मौन गवाही को शब्द दिए हैं। साथ ही उस मौन गवाही के हवाले से पिता-पुत्र के साझे सपनों और यथार्थ के तारतम्य को भी उकेरा है। इन तथ्यों का सिलसिलेवार विवरण इस आलेख के अगले उपखंडों में दिया गया है।

3.2. महत्त्वपूर्ण पाठांशों की समीक्षा

18 मार्च 1984 इस कहानी का प्रस्थान बिंदु है। कुछ घटनाएँ इस दिन की हैं जिनका वर्णन कथा-पाठ के उत्तरार्ध में है। अन्य घटनाएँ, जो इस दिन घटित घटना की पृष्ठभूमि को स्पष्ट करती हैं, पूर्वार्ध में हैं। 18

---

[4] *"हाँ, गोली चलते उसने देखी थी—अपनी आँखों से !"* (बिष्ट 51)

मार्च के किस्से को व्यतीत समय घटनाओं के लगभग बराबर स्पेस दिया गया है। 18 मार्च से पहले घटित घटनाओं में से कुछ का समय स्पष्ट रूप से उल्लिखित है और कुछ का परोक्ष संकेत है। पिछली सभी घटनाओं का लगभग तथ्यसंगत आकलन पिछली तालिका-क में दिया गया है।

पूरे कथा-क्रम में 12 मार्च (1984) कर्ज-मुक्ति का दिन है। यह कहानी का अहम मोड़ (टर्निंग प्वाइंट) है। सामान्य तौर पर सोचा जाए तो अहम बिंदु की घटना का विस्तार से वर्णन होना चाहिए था लेकिन इस दिन की घटना के वर्णन में लेखक ने कुल चार वाक्य ख़र्च किए हैं – तीन वाक्य एक पैराग्राफ में हैं और चौथा अगले पैराग्राफ की पहली पंक्ति है। कथा-घटना के तनाव और उन्मोचन की दृष्टि से देखा जाए तो इस अति संक्षिप्त पाठ-बंध का मर्म एवं औचित्य समझ में आ जाता है। पृष्ठभूमि की विभिन्न घटनाओं के ज़रिये निर्मित तनाव, जिसे एक स्तर पर कहानी का नायक झेलता है और दूसरे स्तर पर पाठक अनुभव करता है, वह इन चार वाक्यों में तेजी से विलीन हो जाता है –

रुपया घटता गया। सात से छह हुआ, छह से पाँच, पाँच से चार, फिर तीन, दो, एक और वह मुक्त हो गया। पूर्णतः मुक्त— संविधान में मिले सारे अधिकारों से लैस देश के किसी भी नागरिक की तरह।

ठीक 12 तारीख सोमवार के दिन उसने अंतिम किस्त चुकायी। ××× (बिष्ट 48)

इसके बाद, 16 17 मार्च की घटनाएँ अगले दो अनुच्छेदों में है। अनु. 25 में आठ और 26 में छह वाक्य हैं। सिवाय अनु. 25 के चौथे और अंतिम वाक्य के, दोनों अनुच्छेदों में छोटे, अनौपचारिक कथनात्मक शैली के वाक्य हैं –

होली उसने ज्यादा नहीं खेली। वह जल्दी थक गया ! वैसे भी वह क्लास फोर से 'डिस्टेंस' बनाये रखता था। फिर उस दिन उसे ज्वर भी पा। पिछली रात खाँसते-खाँसते ही कटी थी। बलगम कुछ ज्यादा ही रक्ताभ हुआ जा रहा था। (बिष्ट 48)

इससे पहले, बिशन दत्त के संघर्ष के समय का चित्रण अनु. 21 से 23 तक, तीन अनुच्छेदों में किया गया है और इनके वाक्य परस्पर अर्थ-निर्भरता में गुँथे हुए हैं। वाक्य-रचना अनौपचारिक कथनात्मक शैली की है लेकिन कथा-मर्म की दृष्टि से वाक्य पाठक-मन को आंदोलित करनेवाले हैं –

एक तो पुरानी बीमारी, ऊपर से पाँच प्राणियों का परिवार, जिसमें ज्यादा बच्चे। पत्नी दूध पीने की सीमा से लगातार बाहर रही थी, इसलिए दूध बिशन का ही कटा। यदा-कदा के मौसमी फल भी अब गैर-मौसमी से बेगाने हो गये और सब्जियाँ कौर को हलक में अटकाने लगीं। (बिष्ट 47)

कथा-उद्यम यानी टी.वी. खरीद की घटना का जिक्र 20वें अनुच्छेद में किया गया है। इसमें कुल 4 दीर्घ वाक्य हैं, दूसरे वाक्य के अलावा बाकी तीन जटिल (संयुक्त और मिश्र वाक्य) हैं। वाक्यों की कथन-शैली आलंकारिक और मुहावरेदार है–

हाथ में आते ही बिशनदत्त ने पूजा के चढ़ावे की-सी निष्ठा से पूरे-के-पूरे दो हजार चावला इलैक्ट्रानिक्स में जमा करवा दिये ××× (बिष्ट 46-47)

गाढ़े समय में क्या कोई दुश्मन का मुंह ताकता है। (बिष्ट 47)

झगड़े की घटना का चित्रण 14वें पैराग्राफ में किया गया है इसमें कुल तीन वाक्य हैं। पहला और तीसरा वाक्य, रचना की दृष्टि से दीर्घ और मिश्र वाक्य प्रकार का है। इन दोनों के बीच, निरंतरता में एक लघु वाक्य है।

सामान्य ज्ञान चर्चा वाले अंश में छोटे-छोटे आठ अनुच्छेद हैं। इनके वाक्य अनौपचारिक-संवादपरक शैली के हैं–

अरे पंडत, बढ़ा अखबार पढ़ता रहता है, जरा एक बात हो बता? ××× (बिष्ट 44)

××× *नहीं बेटा, रआ द इशा में।* (बिष्ट 45)

××× *ये साला रआ द इशा कहाँ हुआ?* (बिष्ट 45)

झगड़े के निपटारे और टी.वी. ख़रीदने के संकल्प की घटना एक अनुच्छेद में दी गई है। इसमें मिश्र और संयुक्त-रचना प्रकार के कुल आठ वाक्य हैं। शुरुआत के एक बड़े मिश्र-संयुक्त वाक्य (*सच्चाई यह है* ××× *सम्मान बच गया।*) को विराम चिह्नों द्वारा तीन वाक्यों में तोड़ा गया है। संकल्प वाक्य भी एक मिश्र वाक्य है। यह पूरा अनुच्छेद किसी फ़िल्म के दृश्य की तरह छोटे-छोटे कट्स के साथ तेजी से घटित होता है और संकल्प वाक्य के रूप में अपने उत्कर्ष पर पहुँच जाता है। इसके बाद का अनुच्छेद एक नई गति से आगे बढ़ता है। संकल्प वाक्य, जैसा ही सघन-संश्लिष्ट वाक्य दूसरे तर्क वाला वाक्य है। चयनित पाठांशों की, वाक्य संरचनात्मक जटिलता का विश्लेषण परिशिष्ट में दिया गया है।

3.3. विशिष्ट कथन शैली

कहानी की कहन को और व्यंग्य को धारदार बनाने के लिए लेखक ने सरल-सहज और अनौपचारिक वाक्य-कथन शैली के साथ ही, बीच-बीच में विशिष्ट कथन शैली का भी प्रयोग किया है। जहाँ सामान्य कहन कथा-गति को आगे बढ़ाती है वहीं ये विशिष्ट कथनांश, कथा-मर्म को गहराई प्रदान करते हैं। उदाहरण के लिए कुछ अंश देखे जा सकते हैं –

कथनांश	टिप्पणी
i. *पिता हुए न हुए बराबर ठहरा।* (बिष्ट 44)	आशय – अगर कोई व्यक्ति अपने बच्चों की इच्छाएँ पूरी न कर सके, उन्हें अपमान से न बचा सके तो वह पिता होने लायक नहीं है। यह अंश जीवन-यापन की कठिन परिस्थितियों के बीच कहानी के नायक द्वारा एक समर्थ और जिम्मेदार पिता बन सकने की चुनौती को आत्म-धिक्कार की तीव्र व्यंजना साथ प्रस्तुत करता है।

ii. आहूजा का प्रश्न ब्रह्मास्त्र साबित हुआ था। (बिष्ट 45) *iii. ब्रह्मास्त्र की मूर्छा से संघर्ष करते हुए* (बिष्ट 45)	आशय – आहूजा के प्रश्न की चुनौती का उत्तर दे पाने में बिशन दत्त असहाय था। उससे जीत पाना लगभग असंभव था। अंश ii में प्रश्न की चुनौती और अजेयता को आलंकारिक रूप से ब्रह्मास्त्र के समकक्ष प्रस्तुत किया गया है। अंश iii में आलंकारिक रूप से एक कठिन चुनौती के सामने बिशन दत्त के जुझारुपन को व्यक्त किया गया है।
iv. अभी बहुत हो गया अब-कुछ-करना चाहिए वाली मानसिकता (बिष्ट 45)	लेखक ने कथा-घटना का चित्रण करते हुए मानसिकता, संज्ञा के विशेषण-कथन में, कथन-लाघव के विपरीत कथन-विस्तार की तकनीक को चुना है। कृदंत विशेषण के रूप में दो लघु वाक्यों को क्रियात्मक प्रत्यय, वाला के साथ संज्ञा के साथ जोड़ा है।
v. पूजा के चढ़ावे की-सी निष्ठा (बिष्ट 46)	आशय – टी.वी. खरीदने का उद्यम बिशन दत्त के लिए परिस्थितियों के त्रास से निवृत्ति पाने का एक बड़ा संकल्प था। इसके लिए खर्च की जा रही राशि उसके लिए कोई साधारण सौदा न होकर एक महत्त्वपूर्ण संकल्प की पूर्ति का साधन थी। इसकी व्यंजना के लिए लेखक ने उपमान के रूप में पूजा के चढ़ावे का प्रतीक प्रस्तुत किया है।

3.4. उल्लेखनीय पदबंध और शब्द प्रयोग

इस कहानी का कलेवर शब्द-प्रयोग की दृष्टि से बहुत समृद्ध और समावेशी है। किसी कहानी को, अर्थपूर्ण और पठनीय कहानी बनाने के लिए लेखक की शब्द-प्रयोग या शब्द-चयन की दृष्टि कैसी होनी चाहिए, यह कहानी इसका एक प्रादर्श प्रस्तुत करती है। इस कहानी में शब्द-प्रयोग की सबसे उल्लेखनीय विशेषता है – किसी विशेष कोटि, शब्द-मूल या शब्द-रचना प्रकार से प्रतिबद्ध न होकर कहानी के अर्थ और संदेश की अपेक्षा के अनुरूप शब्द-चयन, कहन की सहज गति में भाव और विचार के अनुकूल शब्दों का प्रयोग, चाहे वे तत्सम हों, तद्भव हों, देशज-भदेस हों या विदेशी शब्द या फिर संकर शब्द रचनाएँ। शब्द-प्रयोग में व्यापकता-विविधता इस कहानी की सफल कथनीयता और पठनीयता का एक मुख्य आधार है। कहानी में शब्द-पद और पदबंध रचना संबंधी उदाहरण परिशिष्ट में दिए गए हैं।

3.5. विशिष्ट अर्थपरक प्रयोग

शब्द-प्रयोग के अलावा, इस कहानी की सफल कथनीयता और पठनीयता का दूसरा आधार है इसके विशिष्ट अर्थपरक प्रयोग। लेखक ने सफलतापूर्वक दिखाया है कि आम बोलचाल की भाषा और शब्द-प्रयोग के साथ भी कैसे उक्तियों के अर्थगत प्रभाव को रचा जा सकता है। इसके लिए लेखक अग्रप्रस्तुति के विभिन्न तरीकों का उपयोग करता है लेकिन वह उनके कलात्मक खेल में उलझकर नहीं रह जाता। वह कहानी के मर्मस्थलों को बखूबी पहचानते हुए वह विशिष्ट भाषिक चयन, विचलन, सायास और

साभिप्राय प्रयोगों के द्वारा एक उत्कृष्ट कहानी पाठ का गठन करता है। कुछ प्रासंगिक अंशों पर विवेचनात्मक टिप्पणियाँ प्रस्तुत हैं

i. बच्चे तो आखिरकार बच्चे ही हैं। उनका मन रखना ही पड़ता है वरना पिता हुए न हुए बराबर ठहरा। (बिष्ट 44)

बच्चों के मनोभाव और उनकी अपेक्षाओं को पूरी व्यंजकता से स्पष्ट करने के लिए, एक सामान्य, सरल वाक्य संरचना, 'बच्चे बच्चे हैं' में कर्ता और पूरक पदों के साथ क्रमशः तो और ही, निपातों का प्रयोग और इनके बीच परिणामसूचक क्रियाविशेषण का समावेश इस विस्तृत वाक्य (बच्चे तो आखिरकार बच्चे ही हैं) को अर्थगंभीर बना देता है। अगले संयुक्त वाक्य के प्रथम उपवाक्य में मन रखना मुहावरे के साथ पड़ना रंजक क्रिया का उपयोग पिता होने की जिम्मेदारी को तीव्रतर रूप में प्रस्तुत करता है। वरना से जुड़े, इस वाक्य के दूसरे उपवाक्य में कर्ता और क्रिया के बीच क्रियाविशेषण के रूप में हुए न हुए बराबर मानक वाक्य-रचना से साभिप्राय तरीके से विचलित प्रयोग है। ध्यान देना चाहिए कि इसे किसी भी तरह सरलतर या मानकोचित रूप देने पर (जैसे : उसके पिता होना व्यर्थ है) वाक्य की अर्थपरक व्यंजना कमतर हो जाएगी।

ii. अगर कोई और चीज टूट जाती तो?" (बिष्ट 45)

इस अधूरे वाक्य की पूरी अर्थ-व्यंजकता, निपात तो में छिपी है। तो में वाक्य के लुप्त अंश क्या होता? से जुड़ी जिस संभावना पर ज़ोर है, वह है – कोई और चीज़ यानी टी.वी. के टूट जाने की आशंका। यह कहानी जिस कालखंड पर आधारित है उसमें टी.वी. न केवल एक बहुत मँहगा उपकरण, सामाजिक प्रतिष्ठा और प्रदर्शन की वस्तु था बल्कि उसके साथ लोगों का गहरा भावनात्मक रिश्ता भी था। पूरी कहानी में इसी एक अंश पर लेखक ने अपनी तरफ से स्पष्टीकरण दिया है।[5]

iii. 'हैव' और 'हैव नाटस्' में यही तो अन्तर होता है। (बिष्ट 46)

हैव और हैव नॉट्स एक अंग्रेज़ी मुहावरा है जो क्रमशः समाज के सुविधा-संपन्न और सुविधा-वंचित या संघर्षरत वर्ग-विभाजन को इंगित करता है। बिशन दत्त का यह कथन अपने समय और समाज के इन्हीं दो वर्गों के उस सामाजिक अंतर को इंगित करता है जो उपभोक्तावाद के आकर्षण और दवाब की वजह से लोगों के दिलोदिमाग़ पर हावी हो रहा है। मुहावरे का अर्थ-मर्म यह है कि जो सुविधा-संपन्न लोग (हैव्ज़) हैं, उनके लिए हस्तक्षेप करना, सामाजिक शिष्टाचार निभाना, उदार होना/दिखना और अहसान करना सुविधाजनक है लेकिन आर्थिक मोर्चे पर तंगहाल और संघर्षरत लोग (हैव नॉट्स) आपसी कलह, द्वेष और तंगदिली का शिकार बने रहते हैं।

iv. सोचते-सोचते दो और किस्तें निकल गयीं। ××× अब डाक्टर के पास जाना खतरनाक हो गया था, इसलिए बन्द कर दिया। (बिष्ट #47)

बिशन दत्त के संघर्ष का वर्णन करते हुए लेखक बहुत जटिल वाक्यों में बात नहीं कहते। ये वाक्य, रचना और बोधन के स्तर पर जितने सरल-साधारण दिखाई देते हैं, इनकी अर्थ-व्यंजना उतनी ही गहरी है। पहले वाक्य में, दूसरे अनिवार्य खर्चों की वजह से इलाज को नज़र अंदाज़ करने की मजबूरी का भाव छुपा है। दूसरे वाक्य में विरोधात्मक कथन के माध्यम से यह मजबूरी अपने चरम स्तर पर पहुँच जाती है।

v. फिर बच्चे कहाँ जाएँगे? (बिष्ट 47)

[5] यद्यपि इस 'तो' को कल्पना मात्र से उसकी आत्मा काँप-काँप उठती पर चूँकि वे लोग 'तो' पर ज्यादा जोर दे रहे थे इसलिए वह भी बार-बार काँप-काँप जाती आत्मा के बावजूद, जरा जोर से, 'तो क्या होता? कहे जा रहा था। (बिष्ट #)

इस प्रश्न वाक्य का अर्थ अभिधा के स्तर पर प्रकट नहीं होता बल्कि बिशन दत्त के खर्च-प्रबंधन पर लगातार बढ़ रहे दबाव के संदर्भ में लक्षणात्मक रूप से व्यक्त होता है। इस छोटे से प्रश्न वाक्य *फिर बच्चे कहाँ जाएँगे?* में बिशन दत्त के आर्थिक संघर्ष की करुण कथा और उसकी विवशता ध्वनित हो रही है। वाक्य का अर्थ-संदर्भ उसके पीछे के वाक्यों और अनुच्छेदों में अंतर्निहित है।
vi. *वह मुक्त हो गया। पूर्णतः मुक्त- संविधान में मिले सारे अधिकारियों से लैस देश के किसी भी नागरिक की तरह।* (बिष्ट 48)
बिशन दत्त की आर्थिक मुक्ति का विवरण इन दो-ढाई वाक्यों में दिया गया है। पहले वाक्य के पूरक अंश, मुक्त की पुनरुक्ति अगले अधूरे वाक्य – *पूर्णतः मुक्त* में विशेषण के साथ हुई है। अगला वाक्य फिर से मुक्त की विशेषणात्मक व्याख्या करता है – *संविधान में मिले सारे अधिकारियों से लैस देश के किसी भी नागरिक की तरह।* इस तरह, यह लघु अनुच्छेद, कहानी में बिशन दत्त की मुक्ति के पड़ाव को पूरी अर्थपरक गहराई के साथ व्यक्त करता है।
vii. *बाप का सपना किस हद तक बेटे का भी हो जाता है।* (बिष्ट 49)
कहानी के अंतिम खंड का यह वाक्य कहानी के शीर्षक की अर्थ-भूमि से जुड़ा हुआ है। बिशन दत्त के बेटे रघुवा का चरित्र कहानी के शुरुआती भाग में एक आग्रही और उग्र स्वभाव वाले बच्चे की तरह प्रकट हुआ है। इसके विपरीत अंतिम हिस्से में उसके चरित्र के कुछ नये आयाम खुलते हैं। बिशन दत्त को वह टी.वी. खरीदे जाने की एक वजह (तर्क) देता है लेकिन इस वाक्य में वह रुचियों, इच्छाओं या हसरतों के मामले में अपने पिता से स्वभावगत स्तर पर जुड़ता हुआ दिखाई देता है। अपने पिता की तरह रघुवा को भी फ़िल्म-विज्ञापन देखने, कुश्ती-कसरत और एक्शन का आनंद लेने, फ़रमाइशें करने और सपने बुनने का शौक है। इस तरह, उसकी अपने पिता के साथ गहरी नज़दीकी और सहज आत्मीयता दिखाई देती है।
viii. *मजाक का भी तो स्तर होता है।* (बिष्ट 50)
कहानी में टी.वी. विज्ञापनों के प्रभाव को दर्शाने वाले पाठांश में आए यह छोटा वाक्य कुछ गहरे संदेश लिए हुए है। पहला, एक आम मध्यमवर्गीय परिवार में अपने लिए एक टी.वी. ख़रीदना, घर-ख़र्च और कई दूसरी ज़रूरतों की कटौती की क़ीमत पर एक मँहगे सौदे की तरह नज़र आता है। दूसरा, टी.वी. ख़रीद व्यक्ति की आय का इतना बड़ा हिस्सा वसूल चुकी होती है कि उसके बाद जीवन को सुखमय बनाने वाली दूसरी चीज़े खरीद पाने की हिम्मत नहीं बचती। इस स्थिति में, टी.वी. पर मनोरंजन की आड़ में दिखाए जाने वाले विज्ञापन केवल देखने भर में ही सुख देते हैं, उन्हें अपनी ज़िंदगी में शामिल कर पाना कोई हँसी-मज़ाक नहीं। टी.वी. विज्ञापनों के माध्यम से ज़रूरतें पैदा करना और उत्पाद थोपना, एक आम मध्यमवर्गीय व्यक्ति की आर्थिक क्षमता के साथ किया गया क्रूर मज़ाक ही लगता है।
xi. *धुवाँ देखने के लिए रंगीन सैट की आवश्यकता नहीं होती।* (बिष्ट 51)
इस लाक्षणिक वाक्य का तात्पर्य प्रत्यक्ष अनुभव और संसाधनों के बीच के विरोधमूलक संबंध में निहित है। यहाँ लेखक एक दृश्य बिंब के साथ अपनी बात कहते हैं। धुएँ के काले-सफेद (ग्रे) रंग और ब्लैक एंड व्हाइट टी.वी. के रंग संयोजन में एक अनुभवपरक परस्परता है। रंगीन टी.वी. उस अनुभव को गुणात्मक रूप में कुछ बेहतर दिखा सकता है लेकिन मूल अनुभव से भिन्न कोई नई चीज़ नहीं दिखा सकता। पाठांश में वर्णित दृश्य में रघुवा को रिवॉल्वर की नाल से निकलते धुँए की स्पष्ट व्यंजना होते हुए दिखाई गई है और इसकी स्पष्टता को बताने के लिए उसके सादे टी.वी. (उसके मौलिक दृश्य-श्रव्य अनुभव) से अलग किसी रंगीन टी.वी. (संवर्धित संसाधन) का निषेध व्यक्त किया गया है।

x. उल्लेखनीय आलंकारिक, लोकोक्ति और मुहावरेदार वाक्य प्रयोग
● *"इसे कहते हैं आम के आम गुठली के दाम,* ××× *"एन्टरटेनमेंट का एन्टरटेनमेंट और नॉलेज की नॉलेज"* (बिष्ट 45) ● *जब खुदी बुलन्द हो जाए तो फिर रह गया जाता है!* (बिष्ट 46) ● *जब जान पर बनी होती है असम्भव-से-असम्भव निर्णय भी आनन-फानन में हो जाते हैं।* (बिष्ट 48) ● *परकीया प्रेम ही तो असली प्रेम होता है।* (बिष्ट 49) ● *क्या पत्नी है* ××× (बिष्ट 49) ● *रघुवा के मुंह में पानी आ गया, अनजाने ही। आना ही हुआ बच्चा ठहरा। कहने की बात हुई 'मत ललचाये जी।'* (बिष्ट 49) ● *लड़की क्या एक चीज थी। बिशनदत्त का रोम-रोम हाथ-घड़ी के पेंडुलम की तरह देर तक काँपता रहा।* (बिष्ट 49)

3.6. कथांत का विश्लेषण

कथांत भाग का विस्तार, तालिका-ख के अनुसार कहानी के अनु. 27 - 44 , लगभग 3 पृष्ठों में है। कथांत को तीन उपखंडों में बाँटकर देखा जा सकता है – रिलैक्स, इंटरवल और अंत। कथांत भाग में, 29वें अनु. के पहले वाक्य, 31वें अनु. के चौथे वाक्य, 35वें और 38वें अनु. के वाक्य और फिर 41वें और 42वें अनुच्छेद के वाक्यों के अलावा वाक्य प्रायः बहुत बड़े और बहुत जटिल नहीं हैं। कथांत भाग में 18 मार्च का क़िस्सा है। इसकी शुरुआत हल्के-फुल्के ढंग से छोटे-छोटे वाक्यों के साथ होती है।

उदाहरण के लिए कथांत भाग का शुरुआती वाक्य है – *अब 18 मार्च का किस्सा।* (बिष्ट 48) इसी तरह के कुछ अन्य वाक्य हैं – *सारे दिन वह काफ़ी ठीक रहा।;* ××× *वह एक बार भी नहीं खाँसा।; मजा आ रहा था।,* ××× *क्या गाना था!;* ××× *मध्यांतर हुआ।,* ××× *विज्ञापन आने लगे।* (बिष्ट 48-49)

कथांत का मध्यांतर-उपभाग उस समय के मध्यमवर्गीय परिवारों पर विज्ञापन संस्कृति के चढ़ते प्रभाव का चित्रण करता है। बिशन दत्त और रघुवा दोनों को अलग-अलग कारणों से फ़िल्म के साथ-साथ विज्ञापन आकर्षित करते हैं –

विज्ञापन आने लगे। बीच में कुछ-न-कुछ जरूर आयेगा, उसे मालूम था, इसलिए वह बैठा रहा। आहूजा से जी० के० में हारना नहीं है, अगली बार न जाने किस के अण्डों के बारे में बात कर बैठे। रघुवा भी जमा रहा, वह विज्ञापनों का विशेष शौकीन है। विज्ञापनों के संसार का भी तो एक अपना ही आकर्षण है। (बिष्ट 49)

विज्ञापनों के साथ, अपनी वस्तुस्थिति से आभासी दुनिया की तुलना भी आती है।[6] फरमाइशें उभरती हैं।[7] लालच पैदा होता है।[8] मनो-सामाजिक वर्जनाएँ टूटती हैं।[9] अब तक ग़ैर-ज़रूरी चीज़ें जरूरत बनना चाहती हैं।[10] ये सब बातें कथांत का मध्यांतर-उपभाग बताता है।

[6] *पहले चाय का विज्ञापन आया। क्या पत्नी है, बिशन ने न चाहते हुए भी रघुवा की माँ से तुलना करते हुए सोचा।*

इस उपभाग का चरम बिंदु है – शक्तिवर्धक पेय का विज्ञापन।[11] यह अंश दिखाता है कि किस तरह विज्ञापन, अपनी लुभावनी भाषा और प्रतिमान चेहरों के साथ उपभोक्ताओं के दिलो-दिमाग को कब्ज़ा लेना चाहते हैं।

कथांत का अंतिम उपखंड *टिडिंग (अंतराल) के बाद* टी.वी. की आभासी दुनिया और वास्तविक जीवन के अनुक्त संघर्ष को दर्शाती है। इस उपखंड में कथा-अभिव्यंजना और भाषिक कला, दोनों दृष्टियों से कहानी का चरमोत्कर्ष है। घटनाएँ नाटकीय ढ़ंग से, तेज़ी से घटती हैं। ध्वन्यात्मक शब्दों के साथ भावों की अभिव्यंजना चरम पर जा पहुँचती है। ध्वनि और रंगों के बिंब समवेत होकर, बिशन दत्त की मृत्यु के त्रासद दृश्य को एक मर्मस्पर्शी अनुभव में बदल देते हैं।[12] मरते हुए पिता और टी.वी. पर चलते हुए

---

[7] *उसने सोचा चाय होनी ही चाहिए-एक कप गर्म जायकेवाली, जो उसके फिल्म के आनन्द को और भी गहरा बना दे। उसने बैठे-बैठे ही रसोई में खुदुर-बुदुर कर रही रघुवा की माँ को चाय की फरमाइश सुना दी।*

[8] *अब पर्दे पर विस्कुटों की वारी थी। रघुवा के मुंह में पानी आ गया, अनजाने ही। आना ही हुआ बच्चा ठहरा। कहने की बात हुई 'मत ललचाये जी।'*

[9] *फिर सेनेटरी नैपकीन से सुरक्षित लड़की मुस्करायी। लड़की क्या एक चीज थी। विश्वनदत्त का रोम-रोम हाय-घड़ी के पेंडुलम की तरह देर तक काँपता रहा।*

[10] *जब साइकिलों का रेला आया तो रघुआ खड़ा ही हो गया। उसने सोचा, कहे -पापा मेरे लिए एक साइकिल पर उसकी हिम्मत नहीं हुई।*

– सभी उद्धरण (बिष्ट 49)

से

[11] *शक्तिशाली, हृष्ट-पुष्ट और*
चुस्त-दुरुस्त बनने का राज
'शक्ति ! शक्ति ! शक्ति !'
आपके लिए जरूरी सभी आवश्यक विटामिनों और प्रोटीनों से युक्त ।
विश्व प्रसिद्ध अमरीकी कम्पनी के सहयोग से बना
एक सम्पूर्ण खाद्य !
'शक्ति' अपनाइये, दारा हो जाइये। (बिष्ट 50)

[12] ढिशूँऊँऽऊँऽऊँऽढाँस्ऽस्ऽऽस्! आवाज के साथ ही टी० वी० का पर्दा विभिन्न किस्म के रंगों व डिजाइनों से भर गया, यह अनुमान रघुवा अपने सादे सैट पर भी लगाने से नहीं चूका था, उन रंगों का अनुमान जिनमें एक सुर्ख लाल रंग भी जरूर रहा होगा। पर रिवाल्वर के मुंह से, रघुवा ने, हल्का धुआं उठते स्पष्ट देख लिया था। धुवाँ देखने के लिए रंगीन सैट की आवश्यकता नहीं होती। (बिष्ट #)

ख़ुशनुमा विज्ञापन के विरोधाभास के बीच रघुवा, इस दोहरे दृश्य को किसी फ़िल्मी दृश्य के साथ एकाकार होते हुए निस्तब्ध अनुभव करता है।[13]

अनु. 41 से 44 तक का वर्णन अत्यंत नाटकीय शैली में, लेकिन घटित होते यथार्थ को उसकी पूरी गहराई और संजीदगी से साथ उकेरते हुए संरचित हुआ है। इसमें गति, बिंबात्मकता, पारिस्थितिक विद्रूप और भावातिरेक सभी सघनतम रूप में मौजूद हैं। 43वें अनुच्छेद में वर्णन की मार्मिकता चरम पर है, जब रघुवा फर्श पर बहते ख़ून की धारा को देखकर भी चिल्लाने और कुछ भी समझ पाने में ख़ुद को असमर्थ पाता है।[14] अंतिम 44वें अनुच्छेद में लेखक की ओर से केवल एक निश्चयात्मक वाक्य है – *हाँ, गोली चलते उसने देखी थी- अपनी आंखों से ।*

इस लाक्षणिक और निश्चयात्मक वाक्य में अपने पिता की मौत के गवाह के तौर पर रघुवा के अनुभव की विडंबना को मार्मिकता के साथ उकेरा गया है। गोली का चलना टी.वी. के दृश्य का हिस्सा है। उसी समय, पिता बिशन दत्त को ख़ून की उलटी होना, ज़िदगी की वास्तविक घटना है। इन दोनों के बीच टी.वी. के पर्दे पर चल रहा ज़िदगी को और भी सुंदर बनाने का नया ख़ुशनुमा विज्ञापन, आभासी और यथार्थ दुनिया के दो पक्षों के बीच का त्रासद व्यंग्य है। यह अनुभव केवल रघुवा के ही हिस्से में आया है जो एक निरंतरता में टी.वी. फ़िल्म के दृश्य, नये खुशनुमा विज्ञापन और बिशन दत्त की दर्दनाक मृत्यु को देख रहा है। यह अंतिम वाक्य कहानी को सुखांत-दुखांत जैसे आसान विकल्पों से हटकर एक गहरे सन्नाटे में रोक देता है, जो संभवतः एक त्रासद मुक्त अंत (tragic open end) का संकेत है। रघुवा की आँखो के सामने टी.वी. के आभासी पटल और घर के यथार्थ परिवेश में परस्पर गुँथी हुई घटनाएँ, समग्र दृश्यानुभव को जादुई यथार्थ में परिणत कर देती हैं। उपभोक्तावादी सपनों का ऐसा जादू जो यथार्थ पर हमला करके सबको विस्मित कर देता है।

4. **निष्कर्ष:** पंकज बिष्ट की कहानी 'बच्चे गवाह नहीं हो सकते' अपने रचना-शिल्प, साहित्यिक संवेदना और संदेश, तीनों दृष्टियों से एक महत्त्वपूर्ण और पठनीय कृति है। सारांश रूप में कहानी की पृष्ठभूमि दो मूल तर्कों पर आधारित है। अपनी इच्छापूर्ति के लिए टी.वी. ख़रीदना एक तर्क है जो

---

[13] रघुवा देख रहा था, किसी फिल्म के स्लो मोशन शॉट की तरह अपनी पूरी विकरालता और बारीकी में उसके पापा बिशन दत्त अपनी छाती दबाये हुए सेमल के फूल के रुओं-से हवा में थोड़ा-सा उछले थे और उसके बाद धप्प से फर्श पर औंधे मुँह जा पड़े थे। जब वह घट रहा था, रघुवा को लगा था कि वह अपने पापा को रोक सकता है हवा में ही, गिरने से पहले, पर वह इतने आतंक में था कि उसकी सारी इन्द्रियाँ स्तब्ध हो चुकी थीं। (बिष्ट #)

[14] जब तक वह आपे में आया फर्श पर से खून की धारा बहते हुए रसोई घर की ओर जाने लगी थी। आवाज रघुवा की उस समय भी बन्द थी, जैसे किसी ने कस कर गला पकड़ लिया हो। यह कैसे हो सकता है? उसकी समझ में नहीं था रहा था। (बिष्ट #)

कथानक की मुख्यधारा है। दूसरा तर्क अंतर्धारा की तरह चलता है, वह है – ज़रूरत की चादर से पैर बाहर निकालकर भी अपनी व्यक्तिगत और सामाजिक हैसियत के लिए, साथ ही हैसियत के दिखावे के लिए टी.वी. ख़रीदना। अपने व्यक्तिगत और सामाजिक मान-अपमान के सवाल की ज़रूरी प्रतिक्रिया की तरह बिशन दत्त की टी.वी. ख़रीदने ज़िद ही संघर्ष, बीमारी और अंततः उसकी मौत का वास्तविक कारण बनती है। रचना-शिल्प के स्तर पर यह पाठक को कथावस्तु और प्रवाह के साथ अंत तक जोड़े रखती है। जिज्ञासा, कौतूहल, संघर्ष-बोध, करुणा और आकस्मिकता जैसे संवेदना के तत्त्व इसे बड़ी साहित्यिक पहचान देते हैं। इन सबके साथ, उपभोक्तावाद की क्रूर नियति को रेखांकित करता हुआ इसका संदेश इसे बार-बार पढ़ने और गुनने की एक वाजिब वजह देते हैं। इस बेहद चर्चित कहानी-संग्रह की भूमिका में लेखक ने भूमंडलीकरण, उपभोक्तावाद, तकनालाजी और देश-काल की परिस्थितियों के बदलते समीकरणों के हवाले से एक सवाल उठाया है कि क्या कि *हम एक ऐसे फार्म की तलाश करने में सफल हो पाएंगे जो इस समाज का ज्यादा सटीक चित्रण कर सकेगा तो प्रश्न उठ सकता है इसे करेगा कौन?* पंकज बिष्ट का लेखन, विशेष रूप से यह कहानी जिसके साथ हिंदी में जादुई-यथार्थवादी कथा-शैली की शुरुआत मानी गई है, इस प्रश्न का एक गहरा रचनात्मक उत्तर है। इसे, कहानी के पुनर्पाठ या पाठ-विश्लेषण का एक अतिरिक्त कारण मानना चाहिए।

संदर्भ

1. बिष्ट, पंकज. *बच्चे गवाह नहीं हो सकते.* प्रथम सं., नई दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन, 1986.
2. सिंह, दिलीप. *पाठ विश्लेषण (व्यावहारिक प्रारूप)*. प्रथम सं., नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन, 2007.
3. आचार्य, सुरेश. *बीसवीं शताब्दी की खड़ीबोली हिंदी.* अमन प्रकाशन, 2007.
4. सिंह, सुजाता. *पंकज बिष्ट का कथा-साहित्य: परंपरा एवं आधुनिकता का द्वंद्व.* नई दिल्ली, अनंग प्रकाशन, 2022.
5. रेणु, राकेश. *आजकल* , जनवरी-फरवरी 2020. नई दिल्ली, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय.
6. —, फरवरी 2021. नई दिल्ली, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय.
7. बिष्ट, पंकज. *मेरी रचना प्रक्रिया,* https://youtu.be/XTGrXzl4yXU?si=z7Hmx9ZQVUty3hIC
8. राकेश बिहारी. पंकज बिष्ट की कहानियाँ (समालोचन पत्रिका में प्रकाशित आलेख), <https://samalochan.blogspot.com/2020/02/blog-post_20.html>

9. पन्त, मोनिका. पंकज बिष्ट की कहानियों में बाल जीवन संघर्ष, (सेतु पत्रिका में प्रकाशित आलेख),<https://www.setumag.com/2020/01/Pankaj-Bisht-child-struggle.html>
10. परिशिष्ट भाग का लिंक <https://docs.google.com/document/d/1gZcxJx8aZ_A-tSSKCbuAMjNAMipZ0NEUgsY63hgh3KQ/edit?usp=sharing>